क्या अध्यापन कौशल है ?

❑ डेविड कार

अनुवाद - देवयानी

अध्यापन को समझा कैसे जाये ? यह सवाल शिक्षा–जगत के बहुचर्चित सवालों में से एक रहा है। प्रस्तुत आलेख में अध्यापन की प्रकृति को एक तरफ शिक्षण–शास्त्रीय पहलू से जांचने की कोशिश की गयी है, वहीं दूसरी ओर यह देखने की कोशिश भी है कि ऐतिहासिक तौर से अध्यापन शब्द का सामाजिक सरोकार क्या रहा है। कौशल के नाम का पेशेवर शिक्षा के क्षेत्र में कुछ ज्यादा ही इस्तेमाल किया गया है, खास तौर से अकादमिक शिक्षक प्रशिक्षकों द्वारा। इसलिए यहां यह जानने की जरूरत महसूस होती है कि शिक्षण शास्त्र के तकनीकी पहलुओं के मानक पर अध्यापन की समूची प्रक्रिया में कौशल का तत्व कितना होता है और उसके अपने दार्शनिक आधार क्या है ? डेविड कार एडिनबरा यूनिवर्सिटी के प्राध्यापक है।

अध्यापन और शिक्षा

हम शिक्षा और अध्यापन के बीच कुछ अविवादास्पद अन्तर के जरिये अपनी बात शुरू कर सकते हैं । पहला, अध्यापन शब्द का प्रयोग एक प्रकार की गतिविधि को ध्वनित करता है जबकि शिक्षा शब्द के प्रयोग से यह ध्वनित नहीं होता। हम कह सकते हैं कि 'कृपया जब मैं अध्यापन कर रहा हूं उस दौरान व्यवधान न डालें, लेकिन यह कहना बहुत अजीब लगेगा कि 'जब मै शिक्षा कर रहा हूं उस दौरान व्यवधान न डालें ।' अध्यापन को एक सायास गतिविधि भी कहा जा सकता है; यह कार्य कुछ सिखाने के उद्देश्य से शुरू किया जाता है, यही वजह है कि क्या सिखाना है इसका कुछ अनुमान होने पर इस संबंध में कुछ पूर्व समझ बनाई जा सकती है कि किस का अध्यापन किया जाना है । इस सिलसिले में इस बात का कोई खास अर्थ नहीं है कि शिक्षाशास्त्रीय प्रचलनों का आधारभूत व्याकरण भ्रमित करने वाला है । जैसे कि हम कहते हैं कि 'अ' 'ब' का अध्यापक है तो यह पता नहीं चल पाता कि 'ब' विषय है या व्यक्ति । जबकि इस बात को इस तरह से स्पष्ट कहा जा सकता है कि श्रीमान स्मिथ गणित के अध्यापक हैं या श्रीमती जोन्स साराह की या कक्षा चार की अध्यापिका हैं। ये दोनों ही बातें कुछ इस प्रकार की अविवेकी टिप्पणियों का अवसर दे आमंत्रित कर सकती हैं कि ''कोई भी व्यक्ति बच्चों का अध्यापक होता है न कि विषय का'' या फिर इसका विलोम। इस तरह की प्रवृतियों को इस बात के सही वाक्य विन्यास का प्रयोग कर रोका जा सकता है कि 'अ' 'ब' का अध्यापक है और 'स' को पढ़ाता है । यानि अध्यापन किसी व्यक्ति को कोई विषय सिखाना है ।

दूसरी ओर शिक्षा और शिक्षण, गतिविधि से कुछ कम है तो कुछ ज्यादा भी है । बात सिर्फ इतनी ही नहीं है कि अध्यापन की तरह शिक्षा या शिक्षण में मेरा चाय-नाश्ता करना कोई व्यवधान उपस्थित नहीं कर कर सकता, बल्कि जिन परिस्थितियों में हम शिक्षा की बात करते हैं उनमें अध्यापन की बात करना भी उतना ही अप्रासंगिक प्रतीत हो सकता है (जैसे कि अनुभव के द्वारा शिक्षा), वहीं अध्यापन के कुछ ऐसे रूप हैं जिनका शिक्षा के लिहाज से कोई महत्व नहीं है। (जैसे कि खेल का प्रशिक्षण) । इस तरह के कारणों के चलते अध्यापन या शिक्षा को एक प्रक्रिया मानने का भी मैं विरोध करना चाहूंगा, क्योंकि मुझे आशंका है कि ऐसा मानना शिक्षा और स्कूलीकरण (स्कूलिंग) के बीच सामान्य भ्रम पैदा करता है । अध्यापन की गतिविधि या स्कूलीकरण की प्रक्रिया जो कि ऐसे क्रमबद्ध कार्यों या अवसरों जिनकी शुरूआत या अंत की तारीखें निश्चित की जा सकती हैं; के विपरीत शिक्षा को एक ऐसी स्थिति कहा जा सकता है जिसकी कोई तयशुदा शुरूआत या अंत नहीं होता । बल्कि स्कूलीकरण के बारे में यह कहना कहीं स्वाभाविक लगता है कि यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसे हम अपनाते हैं या कि जिससे गुजरते हैं जबकि अध्यापन की तरह ही, शिक्षा के बारे में यह कहना कहीं बेहतर होगा कि यह एक ऐसी संस्था या परियोजना है जिसका उत्तरदायित्व हम लेते हैं या कि जिसमें रत होते हैं । इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि हम अध्यापन की गतिविधि के द्वारा शिक्षा की स्थिति को प्राप्त करने के लिए स्कूलीकरण की प्रक्रिया से गुजरते हैं ।

अध्यापन और दक्षता

इस तरह यह इस बात की ओर संकेत है कि अध्यापन एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा शिक्षा प्राप्त की जा सकती है और शिक्षा अध्ययन का सामान्य उद्देश्य है, यहां यह भी स्पष्ट होना चाहिए कि अवधारणात्मक रूप से जो चीजें अलग-अलग हैं वे भी

व्यवहार या परिणाम के रूप में एक दूसरे से पर्याप्त संबद्ध हैं । बल्कि यह कहने की भी जरूरत कम ही रह जाती है कि अध्यापन का सामान्य पेशेगत हित इसमें निहित है कि उसका महत्व शिक्षा को बढ़ावा देने वाली एक गतिविधि पर केन्द्रित हो, मुझे यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि इस लेख का प्रमुख सरोकार अध्यापन की प्रकृति को शिक्षा प्राप्त करने का माध्यम मानने से जुड़ा है । ऐसी स्थिति में अध्यापन की गतिविधि को शिक्षा की प्राप्ति का माध्यम मानने का क्या होगा ? यहां थोड़ा-सा संशय हो सकता है, मेरे विचार में समकालीन शिक्षाशास्त्रीय सैद्धांतीकरण की लक्ष्य निर्देशित गतिविधियों को दक्षता मानने की एक बड़ी प्रवृति ने पीछे छोड़ दिया है, जो कि निश्चय ही आधुनिक प्रयोगवादी मानसिकता के विकास की देन है। बात सिर्फ इतनी ही नहीं है कि कौशल की बात करना आजकल शैक्षणिक तबके के बीच प्रचलन में है बल्कि पेशेगत तैयारी की संकल्पना में भी हाल ही में उल्लेखनीय बदलाव आया है, जैसे कि 'क्षमता आधारित' कार्यक्रम जिसका झुकाव शिक्षण-कौशल के प्रबंधकीय, अनुशासनात्मक व शिक्षाशास्त्रीय सहित तमाम पहलुओं को पा लेने की ओर दिखाई देता है ।

लेकिन ऐसा क्यों न हो ? असल में अध्यापक बेहतर अध्यापन करें इस लिए अध्यापन को कौशल के अलावा और कहा भी क्या जा सकता है । इसी सिलसिले में, यह देखा जा सकता है कि जिस प्रकार सभी लक्ष्य निर्देशित कार्य और गतिविधियां एक तरह का कौशल होती हैं, इस विचार के प्रति कुछ सामान्य असहमतियां भी हो सकती हैं, उसी प्रकार शिक्षण-बतौर कौशल के बारे में कुछ विशेष असहमतियां भी हो सकती हैं । विभिन्न पेशेवर क्षमताओं-मसलन अध्यापन का अलग स्वरूप, प्रबंधन, सुनने का कौशल, देखभाल - को बतौर एक कौशल देखने पर एक शुरूआती आपत्ति यह है कि यह अवधारणात्मक रूप से नुकसान पहुंचाने वाली और आत्महन्ता प्रतीत होती हें । सायास तौर पर किये जाने वाले प्रत्येक मानव-व्यवहार से सम्बद्ध दक्षता के संदर्भ में बात करना किसी सार्थक अवधारणा या व्यावहारिक लक्ष्य तक पहुंचने में मदद नहीं कर सकता । लेकिन तब इससे दूसरी बात पैदा होती है कि किसी भी गतिविधि, क्षमता और प्रवृत्ति में दक्षता की बात करने का भी पर्याप्त महत्व है । इसके बरक्स कुछ उदाहरण रखे जा सकते हैं जहां कौशल की बात बहुत उचित प्रतीत होती है जबकि दूसरी स्थितियों में नहीं । जैसे कि कोई नर्स यदि सही तरह से बिस्तर नहीं लगाती है तो उसे कहा जा सकता है कि वह बेहतर बिस्तर बनाने का अभ्यास करे। लेकिन यदि किसी में देखभाल के गुण का अभाव है तो उसे बेहतर देखभाल करने के कौशल का अभ्यास करने की सलाह देना बहुत बेतुका लगेगा। इसी तरह प्रारंभिक अंक गणित में किसी बच्चे के कमजोर होने पर उसे जोड़ने के कौशल पर और अधिक अभ्यास करने के लिए तो कहा जा सकता है लेकिन यदि कोई ध्यानपूर्वक सुनता नहीं है तो उससे सुनने के कौशल का अभ्यास करने की बात कहना बहुत बेतुका ही लगेगा ।

दक्षता अवधारणा : विज्ञान और कला

इस तरह, सभी मानवीय गतिविधियों और उपलब्धियों को किसी स्तर पर,किसी भी विशेष अवधारणा के तहत ठीक-ठीक कौशल की परिभाषा में बांधा जा सकता हो, यह जरूरी नहीं । लेकिन यह अवधारणा है कैसी, और क्या यह अध्यापन में कौशल की संभावना को खारिज करती है, सच तो यह है कि यहां कौशल की विविध अवधारणाएं उभरती हैं। इस किस्म की एक अवधारणा के तहत कौशल विभिन्न रचनात्मक मानवीय अभिप्रायों के हित में सामान्य नियमितताओं के दोहन के अनुरूप एक व्यवस्थित, अधिकतम संभव नियमित कार्य प्रणाली है । यह कोई बहुत नया विचार नहीं है, क्योंकि यह कम से कम उतना ही पुराना है जितना अरस्तू का तकनीक के बारे में विचार, लेकिन निश्चय ही इसने अनुभववादी विज्ञान और प्रयोगवादी पद्धति के आधुनिक उभार के साथ ही मनुष्य के सांस्कृतिक एवं आर्थिक विचारों में महत्व हासिल कर लिया । असल में आधुनिक समय में कौशल बहुधा तकनीकी कार्य प्रणाली के समानार्थक प्रतीत होता है, जो कि बड़े पैमाने पर व्यावहारिक विज्ञान के रूप में जाना जाता है । बीसवीं सदी में प्रयोगवादी मनोविज्ञान के विकास के साथ शिक्षण शास्त्र के एक संभावित तकनीक के रूप में अध्यापन बतौर एक कौशल, इस अर्थ में एक ऐसे विज्ञान के रूप में प्रकट हुआ, जिस पर इस किस्म की तकनीक का निर्माण किया जा सकता हो । इस बारे में कोई दो राय नहीं है कि जॉन डिवी और बर्ट्रंड रसल जैसे दार्शनिकों ने भी शिक्षाशास्त्र के वास्तविक विज्ञान के निर्माण की प्रक्रिया में प्रयोगवादी अधिगम सिद्धांतों का गर्मजोशी के साथ स्वागत किया । असल में समकालीन शैक्षणिक सिंद्धांत व व्यवहारों पर एक सदी से ज्यादा समय के व्यावहारिक विज्ञान के विकास के निशान मौजूद हैं, जिसने इस या उस रूप में इस पेशे के लोगों को शैक्षणिक सिद्धांत और व्यवहार के बीच के रिश्ते को शोधपरक तकनीक या व्यावहारिक विज्ञान के रूप में समझने को बढ़ावा दिया और पेशेगत तैयारी के इस किस्म के दक्षता आधारित कार्यक्रम को बढ़ावा दिया जिसने अंतत: अध्यापक शिक्षा को आच्छादित कर दिया ।

लेकिन अध्यापन को कौशल मानें तब भी क्या अध्यापन की गतिविधि को व्यावहारिक विज्ञान या तकनीक के रूप में देखना तर्कसंगत है । हालांकि अध्यापन के कुछ तकनीकी पक्ष भी हैं, या कम से कम शोध के आधार पर इसे व्यवस्थित किया जा सकता है, इससे पूरी तरह इंकार करना भी ज्यादती होगी, लेकिन शिक्षाशास्त्र

की पूर्ण तकनीकवादी अवधारणा को भ्रामक या मिथ्या बताने के पक्ष में और भी बहुत से तर्क हैं । अध्यापन के ऐसे ही तकनीकवादी मॉडल के प्रति हाल ही में एक काफी महत्वपूर्ण असहमति तथाकथित विशिष्टतावादियों की ओर से आई, जिसमें इस बात पर जोर दिया गया है कि अध्यापन में किन्हीं सामान्य नियमों के इस्तेमाल की गुंजाइश बहुत कम होती है और इसमें स्थिति-आधारित विशिष्ट संभावनाओं के उपयोग की गुंजाइश ज्यादा रहती है; इस नजरिए से अध्यापकों को सामान्य शोध आधारित तकनीकों की बजाय ज्यादा लचीली संदर्भ-संवेदी विमर्श हेतु पेशेगत क्षमताओं के अकादमिक या फील्ड के अनुभवों से लैस होना चाहिए । यह विचार इस बात के साथ बहुत सटीक बैठता है कि अध्यापन प्रत्यक्षत: एक तकनीकी धारणा ही प्रतीत नहीं होता; कई बार, वैज्ञानिक दृष्टि से नितांत अनजान बच्चे इस बारे में ज्यादा सटीक बता पाते हैं कि अध्यापन और सीखना क्या है, जीवन में प्रत्येक व्यक्ति को पर्याप्त मात्रा में अध्यापन के अनुभवों से गुजरना ही होता है, जिनमें से अधिकांश वैज्ञानिकता या तकनीकी सहारे के बिना ही होता है, जीसस और सुकरात सहित अब तक हुए कुछ महानतम अध्यापकों ने शोध आधारित सिद्धांतों के बिना ही अपने कार्यों को अंजाम दिया। और तो और कई बार तकनीकी रूप से अत्यधिक व्यवस्थित अध्यापन, अनुप्राणित अध्यापन, जिसका रचनात्मक और कल्पनाशील पहलू नजर आता है, की तुलना में कमतर हो सकता है ।

इस तरह विशिष्टतावादियों से पूरी तरह सहमति रखते हुए भी, बल्कि उनसे दो कदम आगे, रचनात्मकता और कल्पनाशीलता के शिक्षाशास्त्रीय महत्व पर जोर देना अध्यापन को एक विज्ञान या तकनीक की बजाय एक कला या शिल्प मानने की समान रूप से प्रचलित अवधारणा के पक्ष को मजबूत कर सकता है। जिस प्रकार से एक स्वत: स्फूर्त संगीतकार हमेशा अपनी अभिव्यक्ति में कुछ नए पहलुओं को जोड़ता जाता है जबकि एक नकलची उन्हीं पुरानी चीजों को दोहराता रहता है, उसी तरह एक बेहतर अध्यापक हमेशा अपने अध्यापन को जीवंत और खोजपूर्ण बनाए रखने की कोशिश करता है और अपनी कक्षा को किसी एक ढर्रे में बंधने नहीं देता । अध्यापन को विज्ञान नहीं बल्कि कला मानने का शिक्षाशास्त्रीय विचार, निस्संदेह अध्यापन को कौशल मानने के विचार को उस तरह खारिज भी नहीं करता, लेकिन यह इसे एक ऐसा कौशल, खास तौर से शिक्षा के क्षेत्र में, के रूप में देखे जाने से रोकता है, जिसे कुछ निर्देशों को ध्यान में रख कर हासिल किया जा सकता हो । एक तरफ अध्यापन के कौशल को स्थिति-आधारित क्रिया मानने वाले विशिष्टतापूर्ण नजरिये के साथ यह आशंका बनी रहती है कि इसमें यह मानने वालों को भाग्य भरोसे छोड़ दिया जाए, क्योंकि अध्यापन की कला या शिल्प में सामान्य नियम अथवा सिद्धांतों का उपयोग बहुत कम ही होता है इसलिए इसे स्कूल के अनुभव से ही सीखा जा सकता है और इस तरह कालेज में प्राप्त किया जाने वाला प्रशिक्षण अनावश्यक है । दूसरी ओर अध्यापन को कला मानने का विचार जहां व्यक्तित्व के विभिन्न गुणों को अपने में शामिल करता है वहीं उन लोगों की गलत धारणा को भी तोड़ता है कि अच्छे अध्यापक पैदाइशी होते हैं, बनाए नहीं जा सकते । इसलिए यद्यपि यह कहना जल्दबाजी होगा कि शिक्षक- प्रशिक्षक के रूप में हमें जिस सामग्री के साथ काम करना है उसमें सुधार के लिए हम कुछ नहीं कर सकते । हमारे पास अच्छे या खराब बहुत सारे प्रशिक्षु हैं, जिनके लिए तमाम अच्छे या बुरे निर्देश निरर्थक भी प्रतीत हो सकते हैं ।

जिस प्रकार से एक स्वत: स्फूर्त संगीतकार हमेशा अपनी अभिव्यक्ति में कुछ नए पहलुओं को जोड़ता जाता है जबकि एक नकलची उन्हीं पुरानी चीजों को दोहराता रहता है, उसी तरह एक बेहतर अध्यापक हमेशा अपने अध्यापन को जीवंत और खोजपूर्ण बनाए रखने की कोशिश करता है और अपनी कक्षा को किसी एक ढर्रे में बंधने नहीं देता ।

शिक्षणशास्त्रीय सदाचार और नैतिक पहलू

स्पष्टत: कलात्मक कामों और अध्यापन के बीच कोई अनुरूपता बनाने पर बहुत अधिक जोर देना जल्दबाजी होगा । शिक्षणशास्त्रीय मौलिकता और रचनात्मकता की सीमा के परे अध्यापक को एक कलाकार की तरह स्वेच्छा से काम करने की स्वतंत्रता नहीं होती, उनका पेशेगत व्यवहार उनको कुछ नैतिक, सामाजिक और राजनीतिक जिम्मेदारियों में बांधता है । हमारा प्रयास अध्यापन को शिक्षा के व्यवसायिक उन्नयन के रूप में समझने का है, हम यह पाते हैं कि वास्तव में अध्यापन के तकनीकी या कलात्मक अवधारणा में जिस चीज का सर्वाधिक अभाव नजर आता है वह है इसका नैतिक पहलू ।

इसलिए अध्यापन को खासतौर से व्यवहार और मूल्यों की दृष्टि से उपयुक्त नैतिक या नीतिपरक संदर्भों के बिना विशिष्ट तकनीक, शिल्प या कलात्मक कौशल के अनुरूप शैक्षिक कार्य के रूप में चित्रित करना कठिन प्रतीत होता है । लेकिन इसे कठिन क्यों होना चाहिए ? जैसा कि शिक्षक-प्रशिक्षण में दक्षता आधारित कार्यक्रम से प्रतीत होता है कि शायद अब हम अध्यापन को एक ऐसा कौशल नहीं मानते जिसका कि नैतिक पहलू भी है या कि यह

तकनीकी या शिल्पगत कौशल के साथ ही नैतिक कौशल का भी कार्य है ।

फिर भी, यदि अध्यापन के बारे में हमारे तमाम सवाल शिक्षा के प्रोत्साहन से जुडे हैं, तो इस तरह की किसी बात के प्रतिरोध के लिए कुछ ऐसी बातें हैं जिनके बारे में हमें विचार करना होगा। सर्वप्रथम किसी ऐसी दक्षता, जिसका किसी व्यक्ति या वस्तु पर अभ्यास किया जाता है, के विपरीत वास्तविक शिक्षा कहीं अधिक पारस्परिक या दोतरफा कार्य है, जिसमें बेहतर संबंध तथा संवाद के लिए ज्यादा नैतिक तथा मानवीय गुण निहित हैं । इसलिए अध्यापन के सफल सुकराती संदर्भ (जिसे कभी-कभी संवादी भी कहा जा सकता है) में अध्यापक और शिष्य से अक्सर शैक्षिक मुठभेड़ में 'साथी' होने की अपेक्षा की जाती है । इस प्रकार यदि हम अध्यापन में कौशल की भूमिका के महत्त्व को बनाए रखना भी चाहते हैं तब भी अध्यापन को एक ऐसे नैतिक कार्य के रूप में चित्रित करना ज्यादा सटीक होगा जिसे थोड़े या बहुत कौशल के साथ किया जाए, बजाय इसके कि इसे एक ऐसे कौशल के रूप में चित्रित किया जाए जिसे थोड़ी या बहुत नैतिकता के साथ किया जाता हो । इनमें से बाद वाले तरीके में शिक्षा और अध्यापन में कौशल के पहलू को सर्वाधिक महत्व दिया जाना उसी तरह है जैसे विचार की गाड़ी को घोड़े के आगे जोत दिया जाए । दूसरा, इस मान्यता से हटना, कि अध्यापन में नैतिक कौशलों का अस्तित्व बनाने का भी नैतिक पहलू है, को रोका जा सकता है और इसे रोका जाना चाहिए। यहां यह भी दिलचस्प है कि वास्तव में जिस देखभाल की विशेषता को (समस्या समाधान की कौशल के विकास पर केंद्रित आधुनिक नैतिक शैक्षिक रूढ़ियों की प्रतिक्रिया में) हाल में एक महत्वपूर्ण शैक्षिक विशेषता के रूप में स्वीकार किया जा रहा है, यह वही देखभाल (केयरिंग) का कौशल है जिसके निर्माण को पूर्व में हमने कुछ खास कारणों से खारिज कर दिया था ।

लेकिन यदि हम देखभाल को एक कौशल नहीं मानते, तो फिर हम इसे क्या मानेंगे ? यहां हम वर्तमान शैक्षिक-दार्शनिक अंतरदृष्टि से कुछ लाभ ले सकते हैं । हालांकि पूर्व में भी जिस विशिष्टतावाद का जिक्र किया गया है वह शिक्षणशास्त्र में कौशल का हमेशा विरोधी ही नहीं होता, कुछ विशिष्टतावादी विचारशील अभ्यास के कारण अनियत सामान्यीकरण से हट कर अध्यापन संबंधी अरस्तू के तकनीक की बजाय फ्रोनेसिस की ओर भी गए हैं। इस विचार के अनुसार बेहतर अध्यापन के लिए वांछित क्षमताएं व्यक्तिगत प्रक्रियाओं के रूप में बाह्य तौर पर आरोपित या अपनाई गई तकनीक नहीं होतीं, और ऐसी प्रक्रियाएं जिस संवेदनशीलता से उपजती हैं वे एक विशिष्ट किस्म की होती है, संक्षेप में जिस तरह से तकनीक की मुक्ति कौशल में हैं उसी तरह फ्रोनेसिस की मुक्ति नैतिकता में है, जिसे विचारशील या मूल्यांकनपरक प्रकृति के रूप में समझा जाता है । लेकिन विवेकपूर्ण मूल्यांकन की क्षमता से कुछ अंतर के साथ देखभाल को एक विशेषता के रूप में चित्रित करने की (?) प्रवृति से कुछ कमतर होने के बावजूद संवेदनशील देखभाल को एक नैतिक गुण मानना, निश्चय ही पूर्णत: स्वभाविक भी है । मौजूदा अवलोकन को ईमानदारी, समग्रता, सत्यनिष्ठा, सहानुभूति, देखभाल, खुलापन और दूसरों के प्रति सम्मान आदि जैसे शिक्षणशास्त्रीय सद्गुणों की परम्परा से जोड़ कर और धार दी जा सकती है, जो कि कौशल के मानकों पर अध्यापक के मूल्यांकन के सामाजिक वैज्ञानिक चलन से कहीं ज्यादा समयानुरूप प्रतीत होते हैं ।

अध्यापन तथा विकास एवं सीखने की परस्पर विरोधी परम्पराएं

हालांकि यह विचार कि अध्यापन के उल्लेखनीय नैतिक पहलू हैं और यह कि बेहतर अध्यापक के गुण कौशल की बजाय सद्गुणों के ज्यादा अनुकूल हैं, मुझे कौशल आधारित शिक्षणशास्त्र के कुछ विध्वंसक और अब तक नितांत अनपेक्षित परिणामों की आशंका है। वास्तव में अब तक शिक्षा-दार्शनिकों को इस बात से भलीभांति परिचित हो जाना चाहिए कि नैतिक विशिष्टतावाद को लम्बे समय से पूर्णत: सामाजिक सैद्धांतिक दिशा में धकेल दिया गया है; और नैतिक सर्वमुक्तिवाद के उदार सिद्धांत के प्रतिरोध की प्रक्रिया में समुदायवादी झुकाव वाले विशिष्टतावादियों ने नैतिक मूल्यों तथा गुणों को सामाजिक सांस्कृतिक संदर्भों की सापेक्षता में देखा है । बल्कि समकालीन समुदायवाद के प्रमुख प्रचारक अलासडायर मेकिनटायर ने शिक्षा और शिक्षणशास्त्र के बारे में इस तरह के विचार का अनेक बार खुलासा किया है । इसलिए एक जगह मेकिनटायर कहते हैं कि ''शिक्षित जनता'' के लिए सार्वजनिक शिक्षा की संभावना में आधुनिकता की मूल्य रहित सामाजिक सांस्कृतिक परिस्थितयां बाधक हैं । हालांकि एक अन्य जगह पर वे यह भी कहते हैं कि क्योंकि समकालीन सद्गुणों का विचार विभिन्न सांस्कृतिक नैतिक विरासतों को प्रतिबिम्बित करता है इसलिए नैतिक शिक्षा (संज्ञानात्मक विकास या अन्य किस्म की) के उदार विवेकपूर्ण माडल के बरक्स 'सार्वजनिक व्यवहार की कोई साझा नैतिकता' नहीं हो सकती ।

लेकिन यह मान लेना कि नैतिक संघटन किसी अध्यापक या शिक्षक की भूमिका में अंतरनिहित है, उसके शिक्षणशास्त्रीय विश्लेषण के दो विपरीत निहितार्थ प्रतीत होते हैं, जो कौशल के विकास के महत्व को स्थापित करते हैं। पहला, एक सदगुण - सैद्धांतिक अंतरदृष्टि-यह बन जाती है कि क्योंकि नैतिक शिक्षा अपने आप में दक्षता के मॉडल पर कम और मूल्य संचालित

व्यवहार के रूप में ज्यादा ग्रहण की गई है, इसलिए यह ज्यादा विवेकसंगत भी होगा कि नैतिक शिक्षणशास्त्र का निर्माण कौशलपूर्ण व्यवहार की बजाय व्यक्तिगत सद्गुणों के उदाहरणों पर आधारित हो। दूसरा और ज्यादा गंभीर बिंदु यह है कि यदि हम नैतिक सद्गुणों के प्रोत्साहन को शिक्षणशास्त्रीय कौशलों के अभ्यास के रूप में ग्रहण करना भी चाहते हैं तो भी यह स्पष्ट नहीं है कि नैतिक शिक्षणशास्त्र का पूरक कोई निरपेक्ष विचार हो सकता है । एक समुदायवादी विश्लेषण, जिसके अनुसार नैतिक विकास का कोई संदर्भ निरपेक्ष साझा विचार नहीं हो सकता। इस दृष्टि से कम से कम यह स्पष्ट हो जाता है कि नैतिक शिक्षण शास्त्र का ऐसा कोई विज्ञान आधारित शोधपरक विचार नहीं हो सकता, जिससे व्यावसायिक शिक्षक प्रशिक्षण का कोई सक्षम मॉडल विकसित हो सकता हो ।

निस्संदेह यह संभव है कि इससे कुछ सवाल पैदा हो सकते हों । मेरे पूर्व के आग्रह, कि अध्यापन वैचारिक रूप से शिक्षा की ज्यादा व्यापक अर्थान्विति है, से कुछ भिन्नता के साथ क्या मेरे कहने का आशय यह नहीं है कि विकास के मूल्य रहित विचार के सवालों में शिक्षा का उद्देश्य नैतिक रूप से विवादास्पद है ? हम यह क्यों नहीं स्वीकार कर सकते कि पाठ्यक्रम के नैतिक, धार्मिक और राजनीतिक शिक्षा जैसे पहलुओं की तरह ही अधिकांश नहीं तो भी बहुत सारे पाठ्यक्रम मूल्य आक्रान्त और अत्यधिक विवादास्पद होने के बावजूद कोई समस्या पैदा नहीं करते । यदि एक निजी पियानो शिक्षक या जिमनास्टिक कोच का नैतिकता के दबावों के बिना सिर्फ उसके कौशल की दक्षताओं के आधार पर मूल्यांकन किया जा सकता है तो फिर क्यों एक विज्ञान, गणित या कला के अध्यापक का सिर्फ अपने विषय के कौशल की दक्षताओं के आधार पर मूल्यांकन नहीं किया जा सकता; हालांकि मुझे लगता है कि इस तरह के विचार मूल्य निरपेक्ष शिक्षण के सैद्धांतिक मॉडल या शारीरिक गतिविधि के आभास की उपज हैं । विज्ञान, कला या गणित में सीखने, जानने और समझने के इससे भी ज्यादा मजबूत संज्ञानात्मक विकासात्मक पहलुओं में ये मसले ज्यादा बड़ी समस्या के रूप में उभरते हैं ।

विकास के विरोधी पहलुओं के व्यापक पाठ्यक्रम पर प्रभाव

सर्वप्रथम, शिक्षा के विश्लेषक दार्शनिकों को लम्बे समय से शिकायत रही है कि जीन प्याजे और उनके अनुयाइयों द्वारा प्रचलित संज्ञानात्मक शिक्षा जीव विज्ञान, मनोविज्ञान और ज्ञानमीमांसा का मिश्रण है और संज्ञानात्मक विकास के किसी भी मानचित्रण के लिए मानवीय अनुभवजन्य बोधगम्यता की संभावनाओं की नियामक खोज अंतर्निहित होनी चाहिए । लेकिन प्याजे और लारेंस कोहेलबर्ग जैसे संज्ञानात्मक मनोविज्ञान के इन संरचनावादी पुरोधाओं को मानवीय मानसिक विकास के अनिवार्यत: सांस्कृतिक रूप से अपरिवर्तनीय स्वरूप को प्रस्तुत करने के अपने नव कांटवादी तरीके में विकास की इस कहानी में ज्ञानमीमांसात्मक विचार का प्रवेश कितना ही समस्या रहित क्यों न लगता हो, हो सकता है कि इसमें कोई समस्या न हो लेकिन वर्तमान दार्शनिक वातावरण में जहां ज्ञानमीमांसा की भूमिका में कांटवादी स्थापनाएं बहुत कम या बिल्कुल भी व्यापक रूप से प्रचलित नहीं है, इसमें बहुत समस्या हो सकती है। दरअसल, रेडिकल उत्तर आधुनिक संदेहवाद को छोड़ दें तो यह काफी स्पष्ट प्रतीत होता है कि ज्ञानमीमांसा का निहितार्थ सिद्धांतों के गंभीर सवालों में है, और इनकी वैज्ञानिकता, कलात्मकता, ऐतिहासिकता और अन्य पहलुओं की सटीक तार्किक अवस्थिति को लेकर - जब सर्वप्रथम यूनानियों ने विवाद उठाया था - उसके बाद से ही इन पर विवादों का उठते रहना जारी है। व्यक्तिगत विकास के लिहाज से भी ज्ञानमीमांसा के उल्लेखनीय सत्तामीमांसात्मक निहितार्थ हैं । व्यक्तिगत विकास सिर्फ आनुवांशिकी का ही नहीं बल्कि संस्कृति अनुकूलित ज्ञान तथा विश्वास, खासतौर से वैज्ञानिक प्रश्नों, कलात्मक रचनाशीलता, ऐतिहासिक सच्चाई की समझ के साथ ही साथ नैतिक सद्गुणों का भी कार्य है और इनमें इस या उस ज्ञानमीमांसात्मक विरासत के आधार पर विविधताएं पाई जाती हैं । बल्कि हमें यह नहीं कहना चाहिए कि वैज्ञानिक, कलात्मक या ऐतिहासिक समझ को नैतिक सरोकारों से अलग किया जा सकता है क्योंकि यह कहने की जरूरत नहीं है कि विज्ञान, कला और इतिहास के विचारों में नैतिकता के विभिन्न अर्थ निहित हैं ।

व्यक्तिगत विकास सिर्फ आनुवांशिकी का ही नहीं बल्कि संस्कृति अनुकूलित ज्ञान तथा विश्वास, खासतौर से वैज्ञानिक प्रश्नों, कलात्मक रचनाशीलता, ऐतिहासिक सच्चाई की समझ के साथ ही साथ नैतिक सद्गुणों का भी कार्य है और इनमें इस या उस ज्ञानमीमांसात्मक विरासत के आधार पर विविधताएं पाई जाती हैं ।

इस प्रकार मैं यह मानता हूं कि नैतिक विकास की कोई एक अवधारणा नहीं है इसलिए नैतिक शिक्षणशास्त्र की भी कोई सामान्यीकृत अवधारणा नहीं हो सकती और नैतिक शिक्षा के विरोधी विचार के निहितार्थ शिक्षा तथा अध्यापन के अन्य पहलुओं पर भी लागू किए जा सकते हैं । (और, वास्तव में मुझे ऐसा लगता है कि अध्यापन कर प्रशिक्षण की कमतर शैक्षणिक अवधारणा की गहन छानबीन से पता चलेगा कि वे भी इसी तरह की सोच के शिकार हुए हैं ।) निश्चय ही हमें इस बारे में भी स्पष्ट होने की जरूरत

है कि यह सोच कितनी गहरी पैठी है । जैसे कि मौजूदा दावा इस बात का नहीं है कि कोई शिक्षण शास्त्रीय कौशल हो ही नहीं सकते, बल्कि क्योंकि इस तरह की दक्षताओं का शैक्षिक विकास की विभिन्न अवधारणाओं से अंत: संबंध होता है इसलिए अध्यापन को अक्सर पेशेगत शिक्षक प्रशिक्षण के सक्षम मॉडल के बरक्स मूल्य निरपेक्ष प्रति-परिप्रेक्षात्मक पेशेगत कौशलों तक सीमित नहीं किया जा सकता । लेकिन इसके साथ ही हमें मानव-विकास तथा शिक्षा-शास्त्र के रैडिकल सांस्कृतिक सापेक्षवाद को ग्रहण करने के मोह में पड़ने से भी सतर्क रहना चाहिए क्योंकि ऐसा कोई भी सापेक्षवाद शैक्षिक प्रणाली के बारे में सामान्य पेशेगत विमर्श तथा बहस को प्रभावित कर सकता है । अध्यापकों के सामने संभवत: जिस 'शिक्षित जनता' का लक्ष्य हो सकता है और जो पेशेगत विशेषज्ञता को हासिल करने के लिए एक लक्ष्य भी उपलब्ध कराता है, इस नजरिए से निश्चय ही मैकिनटायर के शैक्षिक निबन्ध बहुत उत्तेजित कर देने वाले हैं, क्योंकि ऐसा प्रतीत होता है कि उनके अनुसार आजकल शिक्षा की कोई सामान्य अवधारणा है ही नहीं।

लेकिन क्योंकि मैकिनटायर स्पष्टत: वस्तुनिष्ठ सत्य के विचार का पक्ष लेते हैं, उनके सिद्धांतों की सीधे-सीधे सापेक्षतावाद के रूप में व्याख्या संभव नहीं है, और दरअसल सामान्य शिक्षा की अवधारणात्मक संभावना को खारिज करने की बजाय उनके इस दावे में कि ऐसी किसी अवधारणा पर पेशेगत विशेषज्ञता के विखंडित विमर्श ने अतिक्रमण कर लिया है, उसकी मान्यता की पूर्व कल्पना स्पष्ट दिखाई देती है । इसलिए उनके शिक्षित 'जनता निबन्ध' को किस प्रकार चीजें आधुनिक (या उत्तर आधुनिक) ढंग से बदल गई हैं, के अर्थ में एक समाजशास्त्रीय शोध और उनके 'सद्‌गुण शिक्षा' निबन्ध को समकालीन विकास के संदर्भ में नैतिक शैक्षणिक दृष्टि से क्या स्वीकार्य है और क्या नहीं, के बारे में मानकीय शोध के अर्थ में समझा जाना चाहिए । और निश्यच ही ये बिन्दु पेशेवर शिक्षक प्रशिक्षण में शैक्षिक उद्देश्यों तथा विधियों के बारे में व्यापक सैद्धांतिक बहस और विमर्श की राह में बाधक बनने की बजाय उसे बढ़ावा ही देंगे । वास्तव में मानव अन्वेषण की विरोधी परम्पराओं की अवधारणा का गैर सापेक्षवादी अन्वय अध्यापकीय कौशलों के स्थिति आधारित चरित्र की स्वीकृति को विशिष्टतावादी नजरिये के साथ मिलाकर पेशेवर शैक्षणिक अन्वेषण की वृहत्तर अवधारणाओं को ही इंगित करती है जो कि लघुत्तर क्षमता आधारित अवधारणा में बाधित होती प्रतीत होती है ।

निष्कर्ष

अंतिम विश्लेषण में हालांकि मैं यह मानता हूं कि शिक्षण-शास्त्रीय कौशल होते हैं लेकिन अध्यापन को सिर्फ ऐसे एक कौशल तक सीमित नहीं किया जा सकता। बल्कि मुझे ऐसा लगता है कि कौशल के नाम का पेशेवर शिक्षा के क्षेत्र में कुछ ज्यादा ही इस्तेमाल किया गया है (खासतौर से अकादमिक शिक्षक प्रशिक्षकों के द्वारा तो यह साबित करने के लिए कम भी इस्तेमाल नहीं किया गया है कि उनके पास अध्यापकीय प्रशिक्षुओं को बताने के लिए शिक्षण शास्त्रीय महत्व की कुछ चीजें हैं ।) और यह महारत जिसे दक्षता के नाम से बुलाया जाना उचित ही है, प्रभावशाली अध्यापन की कोई संजीदा समझ बनाने में अपेक्षाकृत बहुत मामूली सी भूमिका निभाती है । पहले तो शिक्षण शास्त्रीय तकनीक के विशिष्ट पहलू को ध्यान में रखते हुए जिसका समकालीन क्षमता व्यापार के विचार में बहुत महत्व मान लिया गया प्रतीत होता है, हालांकि इसमें कोई संदेह नहीं कि अध्यापक के लिए आधुनिक कक्षा प्रबंधन के लिए कुछ सामान्य संस्थागत कौशल को हासिल कर लेना लाभप्रद ही रहता है, लेकिन ऐसा भी नहीं लगता कि इसका इससे ज्यादा कोई उपयोग होगा कि इसके लिए वैज्ञानिक शोध की मदद ली जाए जैसे कि ब्लैक बोर्ड पर धीर-धीरे और साफ-सुथरा लिखना सीखने के लिए थोड़े अभ्यास की जरूरत हो सकती है लेकिन अध्यापक को कक्षा में जिन तकनीकों या योजनाओं की जरूरत पड़ सकती है उनमें से अधिकांश नहीं तो भी अनेक को कौशल कहना कुछ ज्यादा ही होगा ।

मेरा मानना है कि शिक्षा तथा अध्यापन में कौशल का ज्यादा बेहतर उदाहरण वैज्ञानिक या तकनीकी इंजीनियरिंग और प्रबंधन की बजाय कलात्मक तथा शिल्पगत अध्यापन के प्रदर्शनकारी पक्षों, खासतौर से सम्प्रेषण तथा व्यक्तिगत संबंधों पर ध्यान देकर, अभी बनाया जाना है । लेकिन निश्चय ही यह भी अध्यापन के तकनीक या कौशल के पहलू के स्थान पर फ्रोनेसिस या सद्‌गुण को रखने का ही काम करे । जैसे कि मुझे लगता है कि शैक्षिक अधिकार या कक्षा के अनुशासन को किसी किस्म की प्रबंधकीय तकनीक के पहलुओं को समझने के समकालीन प्रयासों के बावजूद शायद इन्हें अंतत: नैतिक संबंधों की संदर्भ सापेक्ष शर्तों में ज्यादा बेहतर समझा जा सकता है, जिसके लिए व्यक्तित्व तथा चरित्र के उचित संसाधन ज्यादा महत्वपूर्ण होते हैं । यह पेशेवर शिक्षक प्रशिक्षकों के लिए परेशानी पैदा करता है क्योंकि इस तरह की क्षमताएं अकादमियों में नहीं कार्यक्षेत्र में ज्यादा प्रभावी ढंग से विकसित हो पाती हैं । दूसरी ओर यदि हम शिक्षण शास्त्रीय कौशल की मौजूदा पेशेगत ग्रस्तता से बाहर आ सकें तो हम यह पाएंगे कि शिक्षा और अध्यापन की कहीं ज्यादा गंभीर पेशेगत चुनौतियां जटिल बौद्धिक, नैतिक और नियामक सवालों के जाल में निहित हैं, जो किसी भी महज तकनीक आधारित प्रशिक्षण को नि:शेष कर सकती हैं । ◆